इकाई 3 छन्दस् एवं कल्प का प्रयोजन एवं प्रतिपाद्य

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 वेदांगों में छन्दस् वेदांग का संक्षिप्त परिचय

3.2.1 छन्दश्शास्त्र का उद्भव

3.3 विषय की दृष्टि से छन्दस ्वेदांग एवं वैदिक छन्दों की उत्पत्ति

3.4 छन्दस् वेदांग का महत्त्व

3.5 प्रमुख वैदिक छन्दों का परिचय

3.6 कल्प वेदांग का संक्षिप्त परिचय एवं इसके प्रणयन का उद्देश्य

3.6.1 कल्प वेदांग के अन्तर्गत श्रौत सूत्र

3.6.2 कल्प वेदांग के अन्तर्गत शुल्ब सूत्र

3.6.3 कल्प वेदांग के अन्तर्गत गृह्य सूत्र

3.6.4 कल्प वेदांग के अन्तर्गत धर्म सूत्र

3.6.5 कल्प वेदांग के अन्तर्गत पितृमेधसूत्र

3.6.6 कल्प वेदांग के अन्तर्गत प्रवर सूत्र

3.7 वैदिक शाखाओं के अनुसार श्रौत सूत्रों का विवेचन

3.7.1 ऋग्वेद की शााखाओं के श्रौत सूत्र

3.7.1.1 ऋग्वेदीय श्रौत सूत्रों का प्रतिपाद्य

3.7.2 यजुर्वेद की शाखओं के श्रौत सूत्र

3.7.2.1 यजुर्वेदीय श्रौत सूत्रों का प्रतिपाद्य

1.7.3 सामवेद की शाखाओं के श्रौत सूत्र

3.7.3.1 सामवेदीय श्रौत सूत्रों का प्रतिपाद्य

3.7.4 अथर्ववेद की शाखाओं के श्रौत सूत्र

3.7.4.1 अथर्ववेदीय श्रौत सूत्रों का प्रतिपाद्य

3.8 वैदिक शाखाओं के अनुसार गृह्य सूत्रों का विवेचन

3.8.1 ऋग्वेद की शााखाओं के गृह्य सूत्र

3.8.2 यजुर्वेद की शाखओं के गृह्य सूत्र

3.8.3 सामवेद की शाखाओं के गृह्य सूत्र

3.8.4 अथर्ववेद की शाखाओं के गृह्य सूत्र

3.9 वैदिक शाखाओं के अनुसार धर्म सूत्रों का विवेचन

3.9.1 ऋग्वेद की शााखाओं के धर्मसूत्र

3.9.2 यजुर्वेद की शाखाओं के धर्मसूत्र

3.9.3 सामवेद की शाखाओं के धर्म सूत्र

3.9.4 अथर्ववेद की शाखाओं के धर्म सूत्र

3.10 सारांश

3.11 शब्दावलियाँ

3.12 अभ्यास प्रश्न

3.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

छन्दस् एवं कल्प वेदांग के प्रयोजन एवं प्रतिपाद्य विषय पर केन्द्रित इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- वेदांगों के स्वरूप से आप परिचित होंगे।
- विशेष रूप से छन्दस् एवं कल्प वेदांग से परिचित हो सकेगें।
- इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप वैदिक छन्दों के विकास एवं उनके स्वरूप से परिचित हो सकेगें।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद आप वेदांगों के अन्तर्गत प्रतिपादित कल्प वेदांग के सभी विषयों को भी समझ सकेगें।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद आप श्रौत सूत्रों के महत्त्व को समझ सकेगें।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद आप शुल्ब सूत्रों के परिचय के माध्यम से विभिन्न प्रकार की वेदियों के स्वरूप को भी जान सकेगें।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद आप आचारएवं व्यवहार शास्त्र के प्रतिपादक धर्मसूत्रों के स्वरूप से परिचित हो जायेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह जान सकेगें कि किस प्रकार गृह्य सूत्रों के माध्यम से संस्कारों का स्वरूप निश्चित हुआ।

3.1 प्रस्तावना

मुण्डकोपनिषद् में महर्षि अंगिरा ने आचार्य शौनक को यह उपदेश दिया था कि – ब्रह्मविद्या के जो ज्ञाता हैं, जिन्हें हम ब्रह्मविद् कहते हैं, उनके अनुसार दो विद्यायें जानने योग्य हैं।एक है **परा** और दूसरी **अपरा विद्या**। परा का तात्पर्य है परमात्म विद्या और धर्म, अधर्म के साधन और उनके परिणाम को बताने वाली विद्या है, अपरा विद्या। आगे इसी की व्याख्या करते हुये कहते हैं कि इनमें ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द ओर ज्योतिष अर्थात् वेद और वेदांग का परिगणन अपरा विद्या के अन्तर्गत है। परा विद्या वह हैं जिससे अक्षर का अधिगम हो जाय अथवा प्राप्ति हो जाय, वह परा विद्या है। अक्षर अर्थात् परमात्मा।

तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दों ज्योतिषामिति। मुण्डकोपनिषद् 1.1.5

वेद के अध्ययन, चिन्तन और मनन की परम्परा निर्बाध गति से हजारों हजारों वर्ष तक चलती रही लेकिन कालक्रम में वेद के उच्चारण पद्वति तथा यज्ञ आदि के अनुष्ठान में कोई त्रुटि न हो जाय, इसके लिये हमारे ऋषियों ने वेद के विज्ञान के रूप में छः सहायक विज्ञान का स्वरूप निश्चित किया। इन्हें हम वेदांग के रूप में जानते हैं। ये छः वेदांग है– शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष ।

1. शिक्षा या Science of Phonetics,

2. कल्प अर्थात् Science of Rituals
3. व्याकरण अर्थात् Science of Grammar
4. निरुक्त अर्थात् Science of Etymology
5. छन्द अर्थात् Science of Prosody
6. ज्योतिष अर्थात् Science of Astronomy and Astrology

प्रस्तुत इकाई में हमारा उद्देश्य केवल छन्दस्एवं कल्प वेदांग के प्रयोजनएवं प्रतिपाद्य को प्रस्तुत करना है। अतः सर्वप्रथम छन्दस् वेदांग के स्वरूप, प्रयोजनएवं प्रतिपाद्य का विवेचन प्रस्तुत करने के उपरान्त कल्प वेदांग के ऊपर चर्चा की जायेगी ।

3.2 वेदांगों में छन्दस् वेदांग का संक्षिप्त परिचय

पाणिनीय शिक्षा में निम्नलिखित सन्दर्भ प्राप्त होता है–

छन्दः पादः तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते ।
ज्योतिषमायनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते ।।

शिक्षाघ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम् ।
तस्मात् सांगमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते ।। पाणिनीय शिक्षा 41–42

पाणिनीय शिक्षा के इस वचन के अनुसार छन्दस्तत्त्व वेद पुरुष का पाद अर्थात् पैर है। दूसरे रूप में हम यह कह सकते हैं कि छन्द के ज्ञान के विना वेद के अध्ययन में हमारी कोई गति नही हो सकती है । पैर का कार्य है स्थिरताएवं गति प्रदान करना। अतः छन्द का ज्ञान वेद के अर्थ को समझने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। इसका ज्ञान हो जाने पर अमृतत्त्व की प्राप्ति होती है। इसी के ज्ञान से सृष्टि यज्ञ का कार्य सम्पन्न होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि वेद के अर्थ को समझने के लिये छन्द का ज्ञान आवश्यक है। जहां तक छन्दों के प्राचीनता का प्रश्न है, छन्द उतने ही प्राचीन हैं जितना कि मन्त्रमयी वाणी। यही कारण है कि भारतीय चिन्तन परम्परा में छन्दों का आधिदैविक, आध्यात्मिक तथा आधिभौतिक तीनों रूपों में विवेचन किया गया है। इसका प्रमाण हमें मुख्य रूप से ऋग्वेद, यजुर्वेदएवं अथर्ववेद के पुरुष सूक्त में प्राप्त होता है। यहां परम पुरुष से छन्द के उद्भव का प्रतिपादन किया गया है। **छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात्,** ऋग्वेद 10.90.9। अथर्ववेदीय पुरुष सूक्त में भी इसी बात को **छन्दो ह जज्ञिरे** के रूप में कहा गया हैं। इस तरह से यह कहा जा सकता है कि वेद के अध्ययन के लिये छन्द केवल उपकारक साधन ही नही माना जाता है, अपितु छन्दःशास्त्र का स्वतन्त्र विद्यास्थान भी है।

पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्रांगमिश्रिताः ।
वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश ।। याज्ञवल्क्य स्मृति 1.3

छन्द शब्द का अर्थ भी हमें वैदिक साहित्य में ही देखना चाहिये। निरुक्तकार महर्षि यास्क कहते हैं – **छन्दांसि छादनात्** । छादन करने से ये छन्द हैं। **छाद्यते छन्द्यते वा अनेन** । छन्द ही मन्त्रों का परिमाण बताते है। इस शास्त्र की इतनी प्रसिद्धि हुई कि– इसे विभिन्न नामों से जाना गया है। जैसे कि– छन्दोविचिति, छन्दोमान, छन्दसां लक्षण, छन्दसां विचय, छन्दोऽनुशासन, छन्दोविवृति तथा वृत्त ।

3.2.1 छन्दःशास्त्र का उद्भव

अब प्रश्न यह उठता है कि छन्दःशास्त्र की परम्परा कहां से प्रारम्भ हुई। वर्तमान में हमारे सामने जो छन्दःशास्त्र का प्रामाणिक ग्रन्थ है, वह है पिंगल का छन्दःसूत्र। इस ग्रन्थ पर यादवप्रकाश की टीका उपलब्ध है। यादवप्रकाश अपनी टीका के अन्त में छन्दःशास्त्र की आचार्य परम्परा का इस प्रकार उल्लेख करते हैं– भगवान् शिव, बृहस्पति, इन्द्र, शुक्र, माडव्य, सैतव, यास्क,, पिंगल । इसी के साथएक और परम्परा का उल्लेख मिलता है। वह है – शिव, गुह अर्थात् कार्तिकेय, सनत्कुमार, बृहस्पति, इन्द्र, शेष अर्थात् पतंजलि और पिंगल।

छन्दश्शास्त्र के ग्रन्थों जैसे कि **छन्दोऽनुशासन** आदि में अलग–अलग परम्परा का उल्लेख मिलता है लेकिन सभी ने पिंगल के योगदान को स्वीकार किया है। इसलिये हम यह कह सकते हैं कि पिंगल के छन्दःसूत्र के माध्यम से इस विद्या की विशेष प्रतिष्ठा हुई। इसकाएक कारण यह भी है कि पिंगल के पूर्व छन्दश्शास्त्र पर कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नही मिलता है लेकिन वैदिक छन्दों के विषय में हमें पर्याप्त सामग्री जिन ग्रन्थों में प्राप्त होती है, उनमे मुख्य हैं– ऋक्प्रातिशाख्य, ऋक्सर्वानुक्रमणी, निदानसूत्र, यजुस्सर्वानुक्रमसूत्र, पिंगलछन्दःसूत्र, उपनिदान सूत्रएवं वेंकटमाधवकृत ऋग्अर्थदीपिका । छन्दश्शास्त्र का इतना विस्तार हुआ कि आगे चलकार इसके दो स्वरूप हो गये– वैदिक और लौकिक, **छन्दसामार्षं लौकिकं च**। उपनिदान सूत्र 1.5

वैदिक साहित्य में प्रयुक्त छन्दों का स्वरूप लौकिक छन्दों से सर्वथा भिन्न है। लौकिक छन्दों में लघु, गुरु मात्राओं का आश्रय लिया जाता है जबकि वैदिक छन्दों में केवल अक्षरों की ही गणना की जाती है। इसलिये वैदिक छन्द अक्षर छन्द ही हैं। यहां पर हम वेदांग के रूप में छन्दस् वेदांग की चर्चा का रहे हैं इसलिये वैदिक छन्दस् वेदांग की चर्चा ही अभीष्ट है। महर्षि गार्ग्य के उपनिदानसूत्र के अनुसार सात मुख्य छन्द और चौदह अतिछन्द मिलकर इक्कीस छन्द हैं। इनके नाम हैं– 1. गायत्री 2. उष्णिक् 3. अनुष्टुप् 4. बृहती 5. पंक्ति 6. त्रिष्टुप् और 7. जगती अतिछन्द के नाम हैं– 1. अतिजगती 2. शक्वरी 3. अतिशक्वरी 4. अष्टि 5. अत्यष्टि 6. धृति 7. अतिधृति 8. कृति 9. प्रकृति 10. आकृति 11. विकृति 12. संकृति 13. अभिकृति 14. उत्कृति

3.3 विषय की दृष्टि से छन्दस् वेदांग एवं वैदिक छन्दों की उत्पत्ति

महर्षि शौनक द्वारा **ऋक् प्रातिशाख्य** नामक ग्रन्थ की रचना की गई है जिसमें कुल अठारह पटल हैं । इनमें अन्तिम तीन पटल के 204 सूत्रों में वैदिक छन्दों का वर्णन किया गया हैं। महर्षि शौनक के ऋक्प्रातिशाख्य में 188 छन्दों का वर्णन मिलता है।

इसके अनन्तरएक और आचार्य हुये जिन्होंने **ऋक्सर्वानुक्रमणी** की रचना की। ये थे आचार्य कात्यायन। आचार्य कात्यायन ने छन्दः प्रकरण को और समृद्ध किया। प्रत्येक संहिता के मन्त्रों में प्रयुक्त छन्दों का वर्णन अनुक्रमणियों में अत्यन्त सूक्ष्मता के साथ किया गया है। आचार्य कात्यायन ने ऋग्वेद के प्रत्येक मन्त्रों के छन्दों का निर्देश सर्वानुक्रमणी में प्रमाण के साथ किया हैं। यहां पर जो वर्णन प्राप्त होता है वह केवल वैदिक छन्दों के सन्दर्भ में है जबकि पिंगल अपने छन्दःसूत्र में वैदिक तथा लौकिक दोंनो प्रकार के छन्दों का वर्णन करते हैं।

वैदिक छन्दों का आविर्भावएवं ऋषियों के द्वारा इसके स्वरूप का प्रकटीकरण हम लोगों के लिये बहुत बडी देन है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह व्यवस्थाएक निश्चित

नियम के अन्तर्गत कार्य करती है। जैसा कि पहले यह कहा जा चुका है कि वैदिक छन्दों की व्यवस्था में अक्षरों की संख्या पर ध्यान दिया जाता है।एक अक्षर या दो अक्षर कम या अधिक हो जाने पर छन्दों का स्वरूप परिवर्तन नही होता । यदि किसी छन्द काएक अक्षर कम हो तो उसे **निचृत्** विशेषण से औरएक अक्षर अधिक हो तो उसे **भुरिक्** विशेषण से युक्त किया गया है।

उदाहरण के लिये त्रिपदा गायत्री के अक्षरों की संख्या 24 है लेकिन 23 अक्षरों वाली गायत्री को **निचृद् गायत्री** और 25 अक्षरों वाली गायत्री को **भुरिग्गायत्री** कहा जाता है। इसी प्रकार दो अक्षरों की हीनता वाली गायत्री को **विराट् गायत्री** तथा दो अक्षरों की अधिकता वाली गायत्री को **स्वराट् गायत्री** छन्द से अभिहित किया गया है। इस तरह की व्यवस्था का प्रतिपादन ऋक्सर्वानुक्रमणी में विस्तार के साथ किया गया हैं और इसके लियेएक पारिभाषिक शब्द दिया गया हे जिये **व्यूहन्** कहते हैं। प्रमुख सात छन्दों में अक्षर संख्या इस प्रकार हैः–

1. गायत्री – 24,
2. उष्णिक् – 28
3. अनुष्टुप् – 32
4. बृहती – 36
5. पंक्ति – 40
6. त्रिष्टुप् – 44
7. जगती – 48

उपर्युक्त क्रम में हमें स्पष्ट दिखाई पड. रहा है कि चार–चार अक्षरों की वृद्धि हो रही है। वृद्धि का यह क्रम अतिजगती, शक्वरी, अतिशक्वरी, अष्टि, अत्यष्टि और धृति छन्द में भी प्रतिपादित है अर्थात् धृति में 72 अक्षर होते है

3.4 छन्दस् वेदांग का महत्त्व

वेद के अर्थ को जानने के लिये सहायक विज्ञान अथवा अंग के रूप में छन्दस् वेदांग का ज्ञान आवश्यक है इसीलिये इसे उपकारक साधन के रूप में स्वीकार किया गया है । इसके महत्त्व का आकलन हम इस रूप में कर सकते हैं कि अग्निचयन में वेदी में जो इष्टिकायें प्रयुक्त होती हैं उन्हें छन्दों के रूप में ग्रहण किया गया है। छन्दों के माध्यम से ही मन्त्रों के परिमाण को बताया जा सकता हैं। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल केएक मन्त्र में कहा गया है कि– गायत्र छन्द से प्रत्येक स्तोम को मापा जाता है।

वैदिक यज्ञएवं वैदिक देवशास्त्र में छन्दों का विशेष महत्त्व है। किसी भी मन्त्र में तीन बाते विशेष रूप से जाननी चाहिये, प्रथमतः उस मन्त्र का ऋषि कौन है अर्थात् किस ऋषि के द्वारा उस मन्त्र का साक्षात्कार किया गया है । मन्त्र का देवता कौन है। वस्तुतः मन्त्र में जिसके विषय में कहा जाता है वही उस मन्त्र का देवता होता है, **या तेनोच्यते सा देवता**। मन्त्र का छादन करने करने वाला है – छन्द। इसलिये छन्द के ज्ञान के विना यज्ञ की क्रिया में प्रवेश नही हो सकता है। यही कारण है कि छन्दों को देविका, देव्यः तथा देवताओं का देवता कहा गया है। छन्दों के द्वारा ही देवताओं ने स्वर्गलोक को प्राप्त किया। ये समस्त इच्छाओं की पूर्ति करते हैं तथा शक्ति प्रदान करते हैं। छन्दों के द्वारा यज्ञ में देवताओं को आहुति प्राप्त होती है। इसीलिये इन्हें

साध्याः देवाः कहा गया है।

छन्दस् वेदांग के विषय में यहां तक कहा गया है कि जो छन्द ज्ञान से रहित ब्राह्मण से यज्ञ कराता है या अध्यापन कराता है वहघोर पाप का भागी होता है। ऋग्वेद में छन्दों के देवताओं का उल्लेख किया गया है। **गायत्री** छन्द का सम्बन्ध अग्नि से है तथा **उष्णिक्** का सविता के साथ सम्बन्ध जुड़ गया। इसी तरह सोम का **अनुष्टुप्** के साथ तथा बृहस्पति का सम्बन्ध **बृहती** के साथ है। विराट् ने मित्र और वरुण में अपना आश्रय लिया तथा **त्रिष्टुप् छन्द** इन्द्र के हिस्से में आया। **जगती छन्द** ने विश्वेदेवों में प्रवेश किया। यह वर्णन ऋग्वेद 10. 130. 4एवं 5 में देखा जा सकता है।

3.5 प्रमुख वैदिक छन्दों का परिचय

वस्तुतः छन्दश्शास्त्र का पूर्ण ज्ञान अत्यन्त कठिन है । लेकिन यह विषय बहुत ही महत्त्वपूर्ण है इसलिये हमें इसका ज्ञान होना चाहिये। इस दृष्टि को ध्यान में रखकर प्रारम्भिक सात छन्दों के स्वरूपएवं उनके लक्षण पर यहां विचार किया जा रहा है। इनमें प्रथम है **गाायत्री छन्द–** गायत्री छन्द में विशेषरूप से तीन पाद होते हैं लेकिन किसी–किसी मन्त्र मेंएक, दो, चार या पांच पाद भी होते हैं। गायत्री छन्द के प्रत्येक पाद में आठ अक्षर होते हैं। अक्षर संख्या में न्यूनता अथवा अधिकता होने से इसके कई भेद होते हैं लेकिन प्रत्येक पाद में समान आठ अक्षर होने से वह गायत्री नाम से ही कहा जाता है। उदाहरण के लिये ऋग्वेद का प्रथम मन्त्र ही गायत्री छन्द में है जिसके प्रत्येक पाद में आठ अक्षर ही हैं। **अग्मीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम्।।**

1. छन्दश्शास्त्र के उपलब्ध ग्रन्थों में गायत्री छन्द के 26 भेद प्राप्त होते हैं। विस्तार के भय से सभी का वर्णन करना यहां सम्भव नही है लेकिन सभी के नाम का स्मरण अवश्य कर लेना चाहिये। त्रिपदा गायत्री के भेद हैं– 1. गायत्री, 2. पादनिचृत गायत्री, 3. अतिपादनिचृत गायत्री, 4. अतिनिचृतगायत्री, 5. अतिनिचृद् गायत्री, 6. वर्धमाना गायत्री, 7. वर्धमाना गायत्रीका द्वितीय भेद, 8. प्रतिष्ठा, 9. वाराही, 10. नागी, 11. यवमध्या, 12. पिपीलिकामध्या, 13. उष्णिग्गर्भा, 14. भुरिक् गायत्री, 15. त्रिपाद विराट, 16. चतुष्पाद्, 17. पदपंक्ति, 18. पदपंक्ति गायत्री का दूसरा भेद, 19. भुरिक् पदपंक्ति गायत्री, 20 – 21. द्विपदा के दो भेद, 22 – 23. द्विपाद विराट् के दो भेद, 24. स्वराट् , 25.एकपदा।

   छन्दश्शास्त्र के अलग–अलग ग्रन्थों में इन भेद प्रभेदों के विषय में अपने–अपने मत हैं जो विशेष रूप से पादएवं अक्षर की दृष्टि से किये गये हैं।

2. **उष्णिक् छन्द–** इस छन्द में सामान्य रूप से तीन पाद और 28 अक्षर होते हैं । यदि गायत्री से इसकी तुलना करें तों इस छन्द में चार अक्षर अधिक होते हैं। इसका उष्णिक् नाम सम्भवतः इस लिये पड़ा कि इसके बढ़े हुये चार अक्षर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं जैसे कि सिर पर पगड़ी अर्थात् उष्णिक्। ये चार अक्षर पाद के प्रारम्भ में और अन्त में भी देखे जाते हैं। अक्षर संख्या की वृद्धि के आधार पर ही इसके आठ और भेद हुये हैं। ये भेद हैं– 1. ककुप्, 2. पुरउष्णिक्, 3. परोष्णिक् 4. ककुम्न्यङ्.कुशिरा, 5. तनुशिरा, 6. पिपीलिकामध्या, 7. चतुष्पाद और 8. अनुष्टुप्गर्भा ।

3. **अनुष्टुप्** – अनुष्टुप् छन्द में सामान्यतः चार पाद होते हैं और प्रत्येक पाद में आठ–आठ अक्षर होते हैं लेकिन छन्दश्शस्त्र में अनुष्टुप् के जो भेद प्राप्त होते हैं

उनमे से कयी तीन पाद वाले भी हैं। अनुष्टुप् के अन्य स्वरूप इस प्रकार हैं– 1. पुरस्ताज्ज्योति, 2. मध्येज्योतिः, इसे पिपीलिकामध्या त्रिपाद भी कहते हैं। 3. उपरिष्टादज्ज्योति, 4. काविराट्, 5. नष्टरूपा , इसे नष्टरूपा इसलिये कहते हैं क्योंकि पादों में विषम संख्या होने के कारण अनुष्टुप् का मूल स्वरूप ही नष्ट हो गया । इसके तीन पादों में क्रमशः 9, 10एवं 13 अक्षर होते हैं। 6. विराट् , तीस अक्षर वालाएवं 33 अक्षर वाला। 8. चतुष्पाद् अनुष्टुप्, 9. पादैरनुष्टुप्, 10 महापदपंक्ति– इसमें 31 अक्षर के छः पाद होते हैं।

4. **बृहती–** बृहती छन्द 36 अक्षर का होता है अर्थात् इसमें अनुष्टुप् से चार अक्षर अधिक होते हैं। बृहती छन्द में सामान्यतः चार पाद होते हैं और प्रत्येक पाद में नौ–नौ अक्षर होते हैं । पादों में अक्षर संख्या के आधार पर इसके भी अनेक भेद हैं जो इस प्रकार हैं– 1. **बृहती**, प्रत्येक पाद में समान अक्षर तथा वह बृहती जिसके दो पादों में 10–10 तथा तीसरेएवं चौथे पाद में 8–8 अक्षर। 3. **पुरस्ताद्बृहती–**प्रथम पाद में 12 तथा अन्य तीन में 8–8 अक्षर। 4. उरोबृहती, 5. पथ्या या सिद्धा बृहती, 6. उपरिष्टाद् बृहती, 7. विष्टार बृहती, 8. विषमपदाबृहती, 9. महा बृहती या सतो बृहती या ऊर्ध्वबृहती , इसे विराडर्ध्व बृहतीएवं त्रिपदा बृहती भी कहते हैं।

5. **पंक्ति–** यदि बृहती से इसकी तुलना करें तों इस छन्द में बृहती से चार अक्षर अधिक होते हैं अर्थात् इसमे चालीस अक्षर होते है। पंक्ति छन्द में भी सामान्यतः चार पाद होते हैं और प्रत्येक पाद में 10–10 अक्षर होते हैं। अक्षरों की पाद व्यवस्था के कारण पंक्ति छन्द के भी कयी भेद होते हैं जो इस प्रकार है–1. सतः पंक्ति, इसके दो प्रकार हैं। 3. आस्तार पंक्ति, 4. प्रस्तार पंक्ति, 5. संस्तार पंक्ति, 6 विष्टारपंक्ति, 7. आर्षी पंक्ति, 8. विराट् पंक्ति, इसकाएक अन्य भेद भी प्राप्त होता है। 10. पथ्या पंक्ति, 11. पद पंक्ति, इसके भी दो भेद हैं। 13. अक्षर पंक्ति, इस छन्द के भी दो भेद हैं। 15. द्विपदा पंक्ति अथवा द्विपदाविष्टारपंक्ति या विराटपंक्ति, 16. जगतीपंक्ति या विस्तार पंक्ति।

6. **त्रिष्टुप् छन्द–** त्रिष्टुप् छन्द में कुल मिलाकर 44 अक्षर होते हैं ।इसके प्रत्येक पाद में 11–11 अक्षर होते हैं लेकिन दूसरे छन्दों की तरह त्रिष्टुप् के भी अनेक भेद होते हैं । भेद की दृष्टि से वस्तुतः त्रिष्टुप् सबसे आगे है क्योकि इनका संख्या कुल मिलाकर 21 है। यहां पर केवल नामोल्लेख ही किया जा सकता है। त्रिष्टुप् के अन्य भेद इस प्रकार है।– 1. त्रिष्टुप्, 2.जागती त्रिष्टुप्, 3. अभिसारणी, 4. विराट्स्थाना, 5. विराट्स्थाना, 6. विराट्स्थाना, विराट्स्थाना, वस्तुतः विराट्स्थाना के तीन भेद है। 7. विराड्रूपा, 8. पुरस्ताज्ज्योतिः, 9. मध्येज्ज्योतिः 10. उपरिष्टाज्ज्योतिः, 11. पुरस्ताज्ज्योतिः का दूसरा भेद, 12. मध्येज्ज्योतिः का दूसरा भेद 13. उपरिष्टाज्ज्योतिः का दूसरा भेद , 14. पुरस्ताज्ज्योतिः काएक और भेद, 15. मध्येज्ज्योतिः का तीसरा भेद 16. उपरिष्टाज्ज्योतिः का तीसरा भेद, 17. महाबृहती या पंचपदा त्रिष्टुप् 18. यवमध्या, 19. पड़क्त्युत्तुरा या विराट्पूर्वा, 20. द्विपदा त्रिष्टुप्, 21.एकपदा।

7. **जगती** छन्द– जगती छन्द के प्रत्येक पाद मे 12–12 अक्षर होते है अर्थात् कुल मिलाकर 48 अक्षर होते हैं। जैसे कि अन्य छन्दों में हम लोगो ने देखा कि पादों में अक्षर संख्या के कम या अधिक होने से उसका स्वरूप बदल जाता है। इस आधार पर जगती के भी अनेक भेद होते हैं। जैसे कि– 1. जगती, 2. उपजगती, 3. पुरस्ताज्ज्योतिः, 4. मध्येज्ज्योतिः, 5. उपरिष्टाज्ज्योतिः, 6. महाबृहती या

पंचपदाजगती, 7. पुरस्ताज्ज्योतिः काएक और भेद, 8. मध्येज्ज्योतिः का दूसरा भेद, 9. उपरिष्टाज्ज्योतिः का दूसरा भेद , 10. षट्पदा महापंक्ति, 11. महापंक्ति का दूसरा भेद, 12.विष्टारपंक्ति जगती अथवा प्रवृद्धपदा, 13. द्विपदा, 14.एकपदा, 15. ज्योतिष्मती।

कुछ और छन्दों के वर्णन हमें वेड्.कटमाधव की छन्दोऽनुक्रमणी और षड्गुरुशिष्य की ऋक्सर्वानुऽक्रमणी की वेदार्थदीपिका नाम की टीका में प्राप्त होते हैं । यद्यपि इनका आधार महर्षि शौनक का पादविधान है। यहां जिन–जिन छन्दों का उल्लेख मिलता है, उनके नाम हैं– अतिजगती, शक्वरी,अतिशक्वरी, अष्टि, अत्यष्टि, धृति, अतिधृति ।

इसके अतिरिक्त महर्षि पतंजलि के निदानसूत्र नामक ग्रन्थ में कुछ और छन्दों के विषय में सूचना प्राप्त होती है यद्यपि इन छन्दों का प्रयोग ऋग्वेद के मन्त्रों में नही प्राप्त होता है लेकिन यजुर्वेद में इनके उदाहरण देखे जा सकते हैं। ये छन्द हैं– **कृति**, इसमे 80 अक्षर होते हैं। **प्रकृति**– इसमें 84 अक्षर होते हैं। **आकृति**– इसमे 88 अक्षर होते हैं। **विकृति**– इसमे 92 अक्षर होते हैं। **संकृति**– इसमे 96 अक्षर होते हैं। **अभिकृति**– इसमे 100 अक्षर होते हैं। **उत्कृति**– इसमे 104 अक्षर होते हैं। इनके भी अक्षर संख्या के बढ़ने आदि से अनेक भेद हैं।

छन्दश्शास्त्र का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। छन्दों के समुदाय भी बनते हैं। इसके लिये प्रगाथ शब्द का व्यवहार किया जाता है। प्रगाथ के भी अनेक प्रकार होते हैं। वैदिक साहित्य के ग्रन्थों में छन्दों के गोत्र, देवता और वर्ण का भी उल्लेख प्राप्त होता है। विशेषरूप से ऋक्प्रातिशाख्य और शुक्लयजुःप्रातिशाख्य के साथ–साथ दैवत ब्राह्मण ओर पिंगलसूत्र में इस विषय में विस्तार के साथ सूचना मिलती है। गायत्री का आग्निवेश्य, उष्णिक् का काश्यप, अनुष्टुप् का गौतम, बृहती का आङ्गिरस, पंक्ति का भार्गव, त्रिष्टुप् का कौशिक और जगती का वशिष्ठ गोत्र है।

इसी तरह गायत्री का अग्नि, उष्णिक् का सविता, अनुष्टुप् का सोम, बृहती का बृहस्पति, पंक्ति का मित्रावरुण, त्रिष्टुप् का इन्द्र और जगती का विश्वेदेवों के साथ सम्बन्ध है। इस विषय में कुछ अलग–अलग मत भी हैं । साररूप में हम यह कह सकते हैं कि वैदिक साहित्य में मुख्यरूप से सात छन्द हैं यद्यपि इनके कई भेद हैं। उन्ही के अन्दर सम्पूर्ण मन्त्र राशि आच्छादित है।

3.6 कल्प वेदांग का संक्षिप्त परिचयएवं इसके प्रणयन का उद्देश्य

कल्प वेदांग कल्प सूत्र के रूप में भी जाना जाता है। कल्पसूत्र कहने का तात्पर्य यह है कि इनकी रचना सूत्रों के रूप में की गई है। सूत्र रूप में प्रस्तुत करने का प्रमुख उद्देश्य यह था कि इन्हें कंठस्थ करने में सरलता हो और प्रयोग में इनका स्मरण सरलता से हो सके इसलिये कल्प के सभी अंग सूत्र रूप में ही रखे गये हैं।

यदि हम कल्प शब्द के निर्वचन पर ध्यान दें तो हमें यह पता लगता है कि कल्प शब्द क्लृप् धातु से निष्पन्न हुआ है। क्लृप् धातु का अर्थ होता है– विधि। इन सूत्रों के द्वारा यज्ञ के विधि विधानों के साथ–साथ आचारएवं व्यवहार से सम्बन्धित नियमों को स्पष्ट किया गया है। इस रूप में इनका नामकरण कल्पसूत्र किया गया है। वैसे कल्प शब्द अन्य अनेक अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। जैसे– ब्रह्मा केएक दिन को भी कल्प कहते हैं। कामनाओं की पूर्ति करने वाला –कल्पवृक्ष।

यह शब्द प्रलय शब्द का पर्याय भी है अर्थात् सृष्टिएवं संहार चक्र। कल्प शब्द का व्यवहारएक और विशिष्ट अर्थ में होता है, वह हैं विविध प्रकार के याग आदि के साथ–साथ सामाजिक संस्कारों को प्रतिपादित करने वाले निर्देशक ग्रन्थ। यहां पर कल्प शब्द का यही अर्थ अभीष्ट है। वेद के प्रतिष्ठित भाष्यकार सायणाचार्य ने यही अपने भाष्य में कहा है–

कल्पसूत्राणि प्रयोगप्रतिपादकानि । कल्पग्रहणेन सूत्राण्येव गृह्यन्त इति।

जैसा कि छन्द के सम्बन्ध में कहा गया है कि छन्द वेदपुरुष के पैर हैं, उसी तरह कल्प वेद पुरुष के दोनों हाथ हैं। यह कहना सर्वथा उचित ही है क्योंकि सभी क्रियाओं का सम्पादन हाथों के द्वारा ही सम्पन्न होता है। लोक में दो प्रकार के कर्म प्रचलित हैं। प्रथमतः वैदिक परम्परा जिसमें प्रवेश अग्निहोत्र धारण करने के पश्चात् होता है और दूसरी है स्मार्त परम्परा। स्मार्त परम्परा का प्रवेश लोक में प्रचलित सभी प्रकार के यागादि, व्रतएवं संस्कार आदि के साथ आश्रम व्यवस्था के नियमन में भी है। इस दृष्टि को ध्यान में रखकर हमारे आचार्यों ने कल्प का विभाजन निम्न लिखित रूपों में किया है–

1. श्रौत सूत्र
2. शुल्ब सूत्र
3. धर्म सूत्र
4. गृह्यसूत्र, पितृमेध सूत्र और प्रवर

3.6.1 कल्प वेदांग के अन्तर्गत श्रौत सूत्र

जैसा कि कहा गया है कि श्रौतएवं स्मार्त के रूप में दो प्रकार के कर्म विहित हैं। वैदिक परम्परा में प्रचलित विभिन्न प्रकार के यज्ञों को पूर्ण रूप से संचालित करने का जो विधि–शास्त्र है, वह है श्रौत सूत्र। श्रौत सूत्र उन्हीं विधियों का प्रतिपादन करते हैं जिनका कि वेद में उपदेश किया गया है। वस्तुतः श्रौत सूत्र अपनी–अपनी शाखा परम्परा का अनुवर्तन करते हैं अर्थात् वेद की शाखा विशेष में जिस प्रकार का निर्देश है उसी के सम्पादन हेतु सूत्र रूप में नियमों को ये श्रौत सूत्र प्रस्तुत करते हैं। यह मूल सिद्धान्त है। यज्ञ के सम्पादन में अथवा श्रौत कर्म के अनुष्ठान में विशेष रूप से पांच अग्नियों की स्थापना होती है जो इस प्रकार हैं–

1. गार्हपत्य अग्नि
2. आहवनीय अग्नि
3. दक्षिणाग्नि या अन्वाहार्यपचन
4. सभ्य और आवसथ्य अग्नि

इन अग्नियों में यज्ञ के ऋत्विक् गण किस प्रकार से किस यज्ञ को पूर्ण करेंगे, सभी क्रियाओं का क्रम क्या होगा तथा अग्निहोत्र धारण करने का स्वरूप क्या होगा, इन सभी विषयों पर सूत्र रूप में, श्रौत सूत्र, विधि का निर्देश करते हैं। इस तरह से यज्ञ संस्था को अनुशासनबद्ध करने के लिये कल्प वेदांग के अर्न्तगत श्रौतसूत्रों का प्रणयन हुआ। इनके रचना काल के सम्बन्ध में यह अवश्य कहा जा सकता है कि इनकी रचना ईसा के आठवीं शताब्दी पूर्व तक हो चुकी थी।

3.6.2 कल्प वेदांग के अन्तर्गत शुल्ब सूत्र

शुल्ब का अर्थ होता है धागा या रस्सी। जिस कार्य में धागा की सहायता से कार्य सम्पन्न हो, उस विधान शास्त्र का नाम है शुल्ब सूत्र। इसकी सहायता से विभिन्न प्रकार की यज्ञ वेदियों के निर्माण के साथ–साथ यज्ञ मण्डप का निर्माण किया जाता है । अनेक प्रकार की चितियों के निर्माण का स्वरूप भी शुल्बसूत्रों के माध्यम से ही पूर्ण होता है। यद्यपि शुल्बसुत्रों का समावेश श्रौतसूत्रों के अन्तर्गत ही है क्योंकि प्रायः श्रौतसूत्रों का अन्तिम भाग शुल्बसूत्र के रूप में निबद्ध किया गया है लेकिन इनके महत्त्व को ध्यान में रखकर इनका वर्णन स्वतन्त्र रूप में किया जाने लगा।

3.6.3 कल्प वेदांग के अन्तर्गत गृह्य सूत्र

गृह्यसूत्रों का सम्बन्ध स्मार्त कर्मों से हैं विशेष रूप सेऐसे कर्म जो विभिन्न प्रकार के संस्कारों से सम्बन्धित हैं। गृह्यसूत्र भी वेद की संहिताओं की अपनी–अपनी शाखा विशेष से सम्बन्धित हैं।

3.6.4 कल्प वेदांग के अन्तर्गत धर्म सूत्र

धमसूत्रों का सम्बन्ध सामाजिक व्यवहारएवं सभी प्रकार के विधि विधानों से है। अपने यहां भारतीय विद्या में कुल अठारह विद्यास्थान हैं जिनमें 14 विद्यायें धर्मस्थान हैं और शेष चार **कौटिलीय अर्थशास्त्र**, **कामन्दकीय नीतिसार** , **नीतिवाक्यामृतएवं शुक्रनीतिसार** विद्या स्थान सर्वसामान्य के लिये हैं अर्थात् सबके लिये हैं। विद्यास्थान चातुर्वर्ण्य व्यवस्था के बाहर हैं लेकिन धर्मस्थान का सम्बन्ध मनुष्य के सामाजिक जीवन के विकास के लिये है अर्थात् जो विषय सामाजिक नही है, उसका सम्बन्ध धर्मस्थान से नही है। समाज के तीन तत्त्व हैं– आचार, व्यवहार और प्रायश्चित्त। समाज आचार से नियन्त्रित होता है। आचार का संस्कार के साथ सम्बन्ध है, इसलिये संस्कार समाज का विषय है। कानून का सम्बन्ध व्यवहार से है। यदि ब्रह्माण्ड के साथ रहना है तो ईश्वर के नियम को मानना पड़ेगाा। धर्मविज्ञान या विधिविज्ञान का मूल वेद है। वेद के द्रष्टा ही धर्मशास्त्र के स्रष्टा हैं। इसी से सत्य का विश्लेषण होता है। इन सबका प्रतिपादक शास्त्र हमारे धर्मसूत्र हैं जो वेद की शाखाओं के क्रम में हमे प्राप्त हुये हैं।

ऋग्वेद में उल्लेख है कि (ऋग्वेद 10:78)– कुरु प्रदेश में देवापि और शान्तनु नामक दो भ्राता थे। देवापि ज्येष्ठ था फिर भी शान्तनु ने राज्य ग्रहण कर लिया। इसके बाद 12 वर्षों तक अवर्षण रहा। तब पुरोहितों ने कहा, बड़े भाई के होते हुये शान्तनु ने राज्य पर अधिकार जमाया इसलिये यह वर्षा संकट उपस्थित हुआ है। शान्तनु बड़े भाई को राज्य देने के लिये तैयार था किन्तु देवापि ने मना कर दिया और राज्य के कल्याण के लिये पुरोहित बना और यज्ञ किया।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि वेद में प्राप्त आख्यानों में धर्म और नीति के तत्त्व पूरी तरह से दिखाई पड़ते हैं। इन्हीं तत्त्वों के माध्यम से शनैः शनैः ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषदों में ऋत और धर्म के नियामक तत्त्वों का विकास होता चला गया और कालान्तर मेंएक स्वतंत्र संस्था के रूप में विकसित हुआ। जिसका निदर्शन हम क्रमशः धर्मसूत्रों में देखते हैं।

3.6.5 कल्प वेदांग के अन्तर्गत पितृमेधसूत्र

पितृमेध के अन्तर्गत प्रायः श्रौतसूत्रों में ही उस विधि का विवेचन किया गया है, जिसमें पुत्र अथवा सगोत्री, पिता के मृत्यु हो जाने पर करता है। 8यह विधि आहिताग्निएवं

अनाहिताग्नि के लिये अलग–अलग है। यह कल्प का अंग इसलिये है कि इसमें तीन या पांच अग्नियों के प्रयोग तथा विसर्जन का विधान है। इसके विशेष विवरण के लिये आप लोग श्रौत सूत्रों के पितृमेध प्रकरण का अध्ययन कर सकते हैं। इसका भी विवरण वेद की शाखा के अनुसार ही श्रौतसूत्रों में प्राप्त होता है।

3.6.6 कल्प वेदांग के अन्तर्गत प्रवर सूत्र

प्रवर का अर्थ ऋषि परम्परा समझना चाहिये। प्रायः सभी प्रधान यज्ञों में तथा विवाह आदि संस्कारों में गोत्र तथा प्रवर के उच्चारण करने की परम्परा भी श्रौतसूत्रों का अंग है। इसके विशेष अध्ययन के लिये आपको पुरुषोत्तमदेव की गोत्रप्रवरमंजरी जैसे ग्रन्थों का अवलोकन करना चाहिये।

3.7 वैदिक शाखाओं के अनुसार श्रौत सूत्रों का विवेचन

3.7.1 ऋग्वेद की शाखाओं के श्रौत सूत्र

यह सर्वविदित है कि वेद की चार संहिता ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद हैं। सभी संहिताओं के अपने–अपने ब्राह्मण, आरण्यकएवं उपनिषद् हैं। इसके साथ ही साथ प्रत्येक संहिता के श्रौतसूत्र, शुल्बसूत्र, गृह्यसूत्रएवं धर्मसूत्र भी थे लेकिन कालक्रम से न तो सभी संहितायें प्राप्त होती हैं और न ही सभी संहिताओं के सूत्र ग्रन्थ। श्रौत सूत्रों का सम्बन्ध अपनी शाखा विशेष से है। शाखा का तात्पर्य यहाँ यह है कि– प्रत्येक संहिता को गुरु–शिष्य परम्परा द्वारा उपदेश के पश्चात् शिष्य उसे कण्ठस्थ कर लेता था। पुनः उसके माध्यम से यह ज्ञान दूसरे शिष्यों को प्राप्त होता हुआ जो आज हम सब के सामने प्रत्यक्ष है। कंठस्थ या श्रुति परम्परा से सुरक्षित यह ज्ञान गुरु परम्परा से प्रवर्तित होता हुआ, शाखा के रूप में जाना गया। आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व ऋग्वेद की इक्कीस संहितायें थीं लेकिन इस समय केवल तीन संहितायें ही उपलब्ध हैं– शाकल संहिता, आश्वलायन संहिताएवं कौषीतकि संहिता या शांखायनी संहिता। ब्राह्मण के रूप में केवलऐतरेयएवं कौषीतकि ब्राह्मण ही प्राप्त है। इस रूप में जो श्रौत सूत्र उपलब्ध हैं वे उस शाखा के साथ–साथ अप्राप्य शाखा के प्रयोग पद्धति का भी पूर्णरूप से परिचय देते हैं। ऋग्वेद के इस समय दो श्रौत सूत्र प्राप्त होते हैं– **आश्वलायन श्रौत सूत्र**एवं **शांखायन श्रौत सूत्र**।

3.7.1.1 ऋग्वेदीय श्रौत सूत्रों का प्रतिपाद्य

आश्वलायन श्रौत सूत्र मुख्य रूप से दर्शपूर्णमास से लेकर अग्न्याधेय, अग्निहोत्र, पिण्डपितृयाग, अन्वारम्भणीय इष्टि, आग्रायण इष्टि, काम्य इष्टियां, चातुमास्य इष्टि के साथ–साथ निरूढ पशु, सौत्रामणी, प्रायश्चित्त, ज्योतिष्टोम,एकाह, अहीन, गवामयन तथा सत्र यागों की विधि विधानों का वर्णन करता है। इस श्रौत सूत्र में उपर्युक्त यज्ञों में होता, मैत्रावरुण, अच्छावाक तथा ग्रावस्तुत नाम के ऋत्विजों द्वारा किये जाने वाले कार्यों का विवरण प्रस्तुत करता है। ऋग्वेद के ऋत्विक् होता के साथ उसके सहायकों का मुख्य कर्तव्य है ऋग्वेद के मन्त्रों, निविदों तथा प्रैषों का पाठ करना। इस श्रौत सूत्र में अश्वमेध के साथ–साथ गवामयन आदि दीर्घकालिक सत्रों का भी विवेचन है। शांखायन श्रौत सूत्र में भी उपर्युक्त विषयों के साथ–साथ वाजपेय तथा शुनःशेप आख्यान को समाहित किया गया है। इस श्रौत सूत्र में सारस्वत सत्रएवं दार्षद्वत सत्र का भी विवरण है जो सास्वती तथा पृषद्वती नदियों के तट पर किया जाता था और अवभृथ स्नान यमुना में करने का विधान है।

3.7.2 यजुर्वेद की शाखाओं के श्रौत सूत्र

यजुर्वेद का विस्तार वर्तमान में कृष्ण यजुर्वेद और शुक्ल यजुर्वेद के रूप में प्राप्त होता है। चरण व्यूह कृष्ण यजुर्वेद की शाखा परम्परा में 86 शाखाओं तथा **शुक्ल यजुर्वेद** (वाजसनेयि शाखा) की पन्द्रह शाखायें स्वीकार करता हैं अर्थात् यजुर्वेद की कुल 101 शाखाओं का परिचय मिलता है। लेकिन वर्तमान में इन दोनों में केवल छःशाखायें वर्तमान में उपलब्ध है। कृष्ण यजुर्वेद की शाखा परम्परा के अन्तर्गत तैत्तिरीय संहिता, मैत्रायिणी संहिता, काठक संहिताएवं कपिष्ठल संहिता तथा **शुक्ल यजुर्वेद**की माध्यन्दिनएवं काण्व संहिता की पाठ परम्परा प्रचलित है।

जहां तक इन शाखाओं के श्रौत सूत्रों का प्रश्न है, उनमें से कृष्ण यजुर्वेद की शाखा परम्परा के इस समय आठ श्रौत सूत्र प्राप्त होते हैं। इनमें तैत्तिरीय शाखा से जो सबन्धित हैं, उनके नाम हैं– बौधायन श्रौत–सूत्र, भारद्वाज श्रौत–सूत्र, आपस्तम्ब श्रौत–सूत्र, हिरण्यकेशी श्रौत–सूत्र, या सत्याषाढ़ श्रौत–सूत्र, वैखानस श्रौत–सूत्रएवं वाधूल श्रौत–सूत्र । इनमें से भारद्वाज श्रौत–सूत्र, आपस्तम्ब श्रौत–सूत्र तथा हिरण्यकेशी श्रौत–सूत्र विषय प्रवर्तन तथा प्रवचन की दृष्टि सेएक दूसरे के समान हैं। इनमें यज्ञीय प्रक्रिया का प्रवर्तन भीएक दूसरे के समान है। कृष्ण यजुर्वेद की मैत्रायिणी शाखा से सम्बन्धित दो श्रौत सूत्र प्राप्त होते हैं। इनके नाम हैं– मानव श्रौत सूत्र तथा वाराह श्रौत सूत्र। काठक शाखा के श्रौत सूत्र का भी कुछ अंश प्राप्त होता है। शुक्ल यजुर्वेद की माध्यन्दिनएवं काण्व संहिता दोनों के लिये कात्यायन श्रौत सूत्र प्रचलित है।

3.7.2.1 यजुर्वेदीय श्रौत सूत्रों का प्रतिपाद्य

यजुर्वेदीय श्रौत सूत्रों में बौधयन श्रौत सूत्र सबसे प्रधान तथा प्राचीन है। इसमें कुल तीस प्रश्न या अध्याय हैं जिसमेंएक से लेकर उन्तीस प्रश्न श्रौत सूत्र से सम्बन्धित हैं जबकि उन्तीसवां शुल्ब सूत्रएवं प्रवर सूत्र है। इस श्रौत सूत्र मे भी आश्वलायन श्रौत सूत्र के समान ही विवेचन है लेकिन इसके 16वें प्रश्न से द्वदशाह, अतिरात्र,एकाह, काठक चयन, द्वैध, कर्मान्तएवं प्रायश्चित्त प्रकरण संगृहीत है। बौधयन श्रौत सूत्र मेंएक बात यह विशेष है कि यह गोपितृयाग का वर्णन करता है।

मानव श्रौत सूत्र, वाधूल श्रौत सूत्र, भारद्वाज श्रौत सूत्र, सत्याषाढ़ श्रौत सूत्र, वैखानस श्रौत सूत्रएवं वाराह श्रौत सूत्र में भी यज्ञीय प्रक्रियाओं का ही वर्णन किया गया है। यह बात अवश्य है कि शाखा भेद से क्रियाओं में थोड़ा बहुत अन्तर है। जैसे कि– किसी ऋत्विक् द्वारा मन्त्र का उच्चारण धीरे–धीरे से करना है या जोर से करना है। प्रत्येक श्रौतसूत्र कुछ न कुछ विवरण के लिये अपना विशेष स्थान रखतें हैं, जैसे कि– वैखानस श्रौत सूत्र अग्निमन्थन तथा अग्नि कुण्डों का वर्णन यथार्थरूप से करता है। यज्ञपात्रों का भी विस्तार से वर्णन करता है।

शुक्ल यजुर्वेदीय श्रौत सूत्रों में, कात्यायन श्रौत सूत्र, शतपथ ब्राह्मण तथा ताण्ड्यमहाब्राह्मण को आधार मानकर यज्ञीय विधि विधानों का वर्णन करता है। इसमें विशेष रूप से चार महासत्रों का विवरण उपलब्ध होता है, ये हैं– प्राजापत्य, शाक्त्यानामयनम्, साध्यानामयनम् तथा विश्वसृजामयनम्। ये सत्र क्रमशः 12 वर्ष, 36 सम्वत्सर, सौ वर्ष तथाएक हजार वर्ष में पूर्ण होते हैं।

3.7.3 सामवेद की शाखाओं के श्रौत सूत्र

सामवेद की शाखा परम्परा में जैमिनीय, राणायनीयएवं कौथुम शाखा का ही वर्तमान मे प्रचलन है। यद्यपिएक समय में सामवेद कीएक हजार शाखायें प्रचलित थीं। यही कारण है कि सामवेद के श्रौत सूत्र भी सबसे अधिक उपलब्ध थे । वर्तमान में जो श्रौत सूत्र प्राप्त होते हैं, उनके नाम हैं– आर्षेयकल्प, लाट्यायन श्रौत सूत्र, द्राह्यायण श्रौत सूत्रएवं जैमिनीय श्रौत सूत्र । लाट्यायन श्रौत सूत्र का सम्बन्ध कौथुम शाखा से है जबकि द्राह्यायण श्रौत सूत्र राणायनीय शाखा से सम्बन्धित है। जैमिनीय श्रौत सूत्र का पता तो उसके नाम से चल जाता है कि इसका सम्बन्ध जैमिनीय शाखा से है। इनमे से सबसे प्राचीन आर्षेयकल्प को स्वीकार किया जाता है। इसके द्वितीय भाग को क्षुद्र कल्पसूत्र के रूप में कहा गया है। इसके साथ ही निदान सूत्रएवं उपनिदान सूत्र भी सामवेदीय श्रौतसूत्र के अन्तर्गत कहे गये हैं।

3.7.3.1 सामवेदीय श्रौत सूत्रों का प्रतिपाद्य

सामवेद से सम्बन्धित श्रौत सूत्रों में यदि आर्षेयकल्प को समझा लिया जाय तो अन्य श्रौत सूत्रों के विषय में सहज ही अनुमान हो जायेगा। मशक गार्ग्य द्वारा प्रणीत यह श्रौत सूत्र साठएकाहों, सैतालिस अहीन, पचास के लगभग सत्रों तथा अठारह अयनों से सम्बन्धित सामों, स्तोमों तथा क्लृप्तियों का वर्णन प्रस्तुत करता है। इस श्रौत सूत्र में यज्ञों में विनियोग किये जाने वाले गानों अर्थात् सामन् को सामवेद के ऊह तथा रहस्य गाान से लिया गया हैं। इसके साथ ही ग्रामगेयगान और अरण्यगेयगानों को भी सम्मिलित किया गया है।

इसी प्रकार क्षुद्रकल्प सूत्र में भी पचासीएकाहों से सम्बन्धित सामों का विवेचन है। इस कल्प सूत्र की विशेषता यह है कि यह उन काम्य तथा प्रायश्चित्त कर्मों के विषय में बताता है जिनके विषय में आर्षेय कल्प मौन है।

जैमिनीय श्रौतसूत्र का कलेवर सूत्र, कल्पएवं पर्याध्याय के रूप में विभाजित है। सर्वप्रथम ज्योतिष्टोम, अग्न्याधान तथा अग्निचयन से सम्बद्ध सामों को बताया गया है। कल्प का विषय आर्षेय कल्प के समान है। इसमें सामगान के विविध नियम के साथ–साथ सामों के देवता, छन्द, सामों के अन्त, निधनों के ऋषि तथा रथन्तरजामि का विवेचन किया गया है। यज्ञीय विधि विधान की दृष्टि से यह प्रमुख यजुर्वेदीय श्रौत सूत्रों के समान है।

सामवेदीय श्रौत सूत्रों में लाट्यायन श्रौत सूत्र का वैशिष्ट्य यह है कि– यह श्रौत सूत्र उद्गाता तथा प्रस्तोता के प्रातः सवन के कर्तव्य के साथ–साथ सोमयाग तथा इसकी संस्थाओं से सम्बन्धित विभिन्न दीक्षा का विवेचन करता है। इसके चतुर्थ प्रपाठक में वीणा के विविध प्रकार के साथ–सथा वीणा निर्माण की विधि का भी विवेचन किया गया है। इसमे कुल दश प्रपाठक हैं।

द्राह्यायण श्रौत सूत्र का प्रतिपाद्य विषय भी कुछ परिवर्तनों के साथ सामवेद के दूसरे श्रौत सूत्रों की तरह ही है जबकि निदानसूत्र छन्दों आदि की परीक्षा करके उन्हें प्रस्तुत करता है।

3.7.4 अथर्ववेद की शाखाओं के श्रौत सूत्र

अथर्ववेद को ब्रह्म वेद, भृगु वेद, यातु वेद, भैषज्य वेद, क्षत्र वेद, ग्रामयाजि वेद आदि नामों से अभिहित किया जाता है। चरण व्यूह इसकी नौ शाखा परम्परा का वर्णन

करता है – पैप्पला, शौनका, दान्ता, प्रदान्ता, औता, जाबाला, ब्राह्मपलाश, कुनखीवेददर्शीएवं चारण विद्या। लेकिन इनमें से केवल दो की ही शाखा परम्परा आज प्रचलित है– पैप्पलादएवं शौनक लेकिन इनमे से केवलएक ही श्रौत सूत्र प्राप्त होता है वह है– वैतान श्रौत सूत्र। यह श्रौत सूत्र ब्रह्मा नामक ऋत्विक् के सभी कर्तव्यों का विवरण प्रथम अध्याय में ही कर देता है। इस श्रौत सूत्र में आठ अध्यायएवं 43 कण्डिकायें हैं जिनमें अथर्ववेदीय परम्परा के सभी यज्ञ आदि का विवेचन किया गया है। वैतान श्रौत सूत्र पर सोमादित्य का भाष्य प्राप्त होता है।

3.7.4.1 अथर्ववेदीय श्रौत सूत्रों का प्रतिपाद्य

अथर्ववेद के श्रौत सूत्रों का परिचय हमें वैतान सूत्र या वितान सूत्र के रूप में प्राप्त होता है। इसे अथर्वसूत्र आथर्वण के रूप में भी सम्बोधित करते हैं। इसकी रचना का आधार इसका गृह्यसूत्र अर्थात् कौशिकसूत्र है। इसी कारण इसे कौशिकीयसूत्र भी कहा जाता है। इसके आठ अध्यायों में वह सभी विषय समाहित हैं जिनका वर्णन अन्य श्रौतसूत्रों में उनकी अपनी शाखा के अनुसार प्राप्त होता है। इसकी अपनी विशेषता यह है कि कौशिकसूत्र में प्रतिपादित गणों का यहां वर्णन किया गया है। जैसे– चातन गण, वास्तोष्पत्यगण, अपां सूक्तानि, सम्पात् सूक्तानि, सहस्रबाहुसूक्त आदि।

3.8 वैदिक शाखाओं के अनुसार गृह्य सूत्रों का विवेचन

जैसा कि इनके नाम से ही प्रतीत होता है कि गृह्य सूत्रों का सम्बन्ध सामाजिक संस्कारों से हैं। इनके अन्तर्गत सभी प्रमुख संस्कारों के साथ–साथ वास्तु प्रकरण का भी विधान किया गया है। गृहस्थ के लिये आवश्यक पांच विशेष महायज्ञ का वर्णन भी इन्हीं के अन्तर्गत है। ये पांच महायज्ञ हैं– ऋषि तर्पण, वेदाध्ययन, उपाकर्म, समावर्तन तथा राजसन्नाहन। सम्पूर्ण श्राद्ध प्रकिया भी गृह्य सूत्र का ही विषय है लेकिन क्रमएवं विस्तार की दृष्टि से सभी श्रौत सूत्रों में विभिन्नता है। यहां पर शाखा परम्परा की दृष्टि से उनका वर्णन किया जा रहा है–

3.8.1 ऋग्वेद की शाखाओं के गृह्य सूत्र

ऋग्वेद के इस समय केवल तीन ही श्रौत सूत्र प्राप्त होते हैं– आश्वलायन श्रौत सूत्र, शांखायन श्रौत सूत्रएवं कौषीतकि श्रौत सूत्र । इसके अतिरिक्त अभी भी इस शाखा के कुछ गृह्य सूत्र अप्रकाशित हैं। इनका उल्लेख विभिन्न टीकाकारों के द्वारा किया गया है। शांखायन श्रौत सूत्रएवं कौषीतकि श्रौत सूत्र में आपस में बहुत समानता है। प्रथम चार अध्याय तोएक जैसे ही है केवल कौषीतकि मेंएक अध्याय अलग से है।

3.8.2 यजुर्वेद की शाखाओं के गृह्य सूत्र

जहां तक यजुर्वेद की शाखाओं के गृह्य सूत्रों का प्रश्न है, उनमें से कृष्ण यजुर्वेद की शाखा परम्परा के सबसे अधिक गृह्य सूत्र प्राप्त होते हैं। इनमें तैत्तिरीय शाखा से जो सबन्धित हैं, उनके नाम हैं– भारद्वाज गृह्य–सूत्र, वैखानस गृह्य–सूत्र,एवं आपस्तम्ब गृह्य–सूत्र। हिरण्यकेशी गृह्य–सूत्र, या सत्याषाढ़ गृह्य–सूत्र का सम्बन्ध खाण्डिकीय शाखा से है। मानवगृह्य–सूत्र, मैत्रायिणी शाखा का गृह्य–सूत्र है। काठक गृह्य–सूत्र काठक शाखा का तथा वाराह गृह्य–सूत्र, का सम्बन्ध वाराह शाखा से है जो मूलतः मैत्रायिणी शाखा की ही उपशाखा है। आग्निवेश्य गृह्य–सूत्र, वाधूल शाखा का गृह्य–सूत्र माना जाता है। कठ कपिष्ठल गृह्य–सूत्र अभी भी अप्रकाशित है।

शुक्ल यजुर्वेदकी माध्यन्दिनएवं काण्व दोनों शाखाओं के लिये पारस्कर गृह्य–सूत्र ही मान्य है। यह गृह्य–सूत्र भी अन्य गृह्य–सूत्रों की तरह अत्यन्त विस्तार के साथ सभी सामाजिक संस्कारों का वर्णन करता है जिसमें प्रमुख हैं– विवाह आदि संस्कार, प्रतिदिन किये जाने वाले होम तथा अन्न बलि, मासिक तथा वार्षिक कर्म, प्रायश्चित्त कर्म, वापी, कूप, तडागादि की स्थापना विधि, श्राद्ध प्रकरण आदि। इस गृह्य–सूत्र पर अनेक आचार्यों की टीकायें प्राप्त होती हैं।

3.8.3 सामवेद की शाखाओं के गृह्य सूत्र

यद्यपि जैमिनीय, राणायनीयएवं कौथुम शाखा की ही पाठ परम्परा वर्तमान में उपलब्ध हैं लेकिन गृह्य–सूत्रों के रूप में इस शाखा के गोभिल गृह्य–सूत्र, खादिर गृह्य–सूत्र, द्राह्यायण गृह्य–सूत्र, जैमिनीय गृह्य–सूत्रएवं कौथुम गृह्य–सूत्र प्राप्त होते हैं।

3.8.4 अथर्ववेद की शाखाओं के गृह्य सूत्र

अथर्ववेद की नौ शाखा परम्परा का उल्लेख किया गया है लेकिन जहां तक इसके गृह्य–सूत्रों के प्राप्त होने का विषय है, केवलएक गृह्य–सूत्र अर्थात् कौशिक गृह्य–सूत्र प्राप्त होता है। इस गृह्य–सूत्र के विषय में भी विद्वानों का यही मत है कि वस्तुतः यह श्रौत सूत्र ही है। इसका प्रतिपाद्य विषय दर्शपूर्णमास, राजा से सम्बन्धित कर्म जैसे राज्याभिषेक, रोग निवारक, संतानोपत्ति, गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन तथा वशीकरण आदि से सम्बन्धित कर्म का क्रम प्रारम्भ में प्रस्तुत किया गया है। इसके अनन्तर शान्ति कर्म, अभिचारक कर्म, मांगलिक कर्म, विवाह तथा अन्त्येष्टि आदि के विषय में भी कहा गया है। अन्तिम 13वेंएवं 14वें अध्याय में अद्भुत कर्म, वेदारम्भ, इन्द्रमहोत्सवएवं अनध्याय का वर्णन किया गया है।

3.9 वैदिक शाखाओं के अनुसार धर्म सूत्रों का विवेचन

वेद की चारों संहिताओं के जैसे अपने–अपने ब्राह्मण, आरण्यकएवं उपनिषद् हैं वैसे ही धर्मसूत्र भी हैं। लेकिन कालक्रम से न तो सभी संहितायें प्राप्त होती हैं और न ही सभी संहिताओं के धर्मसूत्र। उपलब्ध धर्म सूत्रों का सम्बन्ध अपनी शाखा विशेष से है जिनका वर्णन नीचे किया जा रहा है।

3.9.1 ऋग्वेद की शाखाओं के धर्मसूत्र

धर्मसूत्रों में **गोभिल धर्मसूत्र**एवं **वासिष्ठ धर्मसूत्र** को ऋग्वेद से सम्बन्धित धर्मसूत्र माना गया है। तीस अध्यायों में विभाजित यह धर्मसूत्र स्नातक अर्थात् ब्रह्मचारी के कर्तव्यों के साथ–साथ उपनयनएवं पंचमहायज्ञ आदि का विवेचन करता है

3.9.2 यजुर्वेद की शखाओं के धर्मसूत्र

कृष्ण यजुर्वेद के सबसे अधिक धर्म सूत्र प्राप्त होते हैं। इनमें तैत्तिरीय शाखा से सबन्धित धर्म सूत्र बौधायन धर्मसूत्र, वैखानस धर्म–सूत्र,एवं आपस्तम्ब गृह्य–सूत्र हैं। हिरण्यकेशी धर्म–सूत्र, का सम्बन्ध खाण्डिकीय शाखा से है। हारीत धर्म सूत्र भी प्राप्त होता है जिसका सम्बन्ध मैत्रायिणी शाखा के साथ कहा गया है।

3.9.3 सामवेद की शाखाओं के धर्म सूत्र

सामवेद के दो धर्मसूत्र प्राप्त होते हैं– गौतम धर्म सूत्रएवं विष्णु धर्म सूत्र।

3.9.4 अथर्ववेद की शाखाओं के धर्म सूत्र

अथर्ववेद का कोई भी धर्मसूत्र अभी तक प्रकाश में नही आया है।ऐसी स्थिति में दूसरी शाखा में प्रवर्तित सूत्र ही सामाजिक व्यवहार आदि में प्रयुक्त होते हैं।

3.10 सारांश

वेद के अर्थ को समझने के लिये छन्द का ज्ञान आवश्यक है। जहां तक छन्द के प्राचीनता का प्रश्न है, छन्द उतने ही प्राचीन हैं जितना कि मन्त्रमयी वाणी। यही कारण है कि भारतीय चिन्तन परम्परा में छन्दों का आधिदैविक, आध्यात्मिक तथा आधिभौतिक तीनों रूपों में विवेचन किया गया है। वैदिक छन्दों का आविर्भावएवं इसके स्वरूप का प्रकटीकरण ऋषियों के द्वारा हम लोगों के लिये बहुत बडी देन है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह व्यवस्थाएक निश्चित नियम के अन्तर्गत कार्य करती है। वैदिक साहित्य में प्रयुक्त छन्दों का स्वरूप लौकिक छन्दों से सर्वथा भिन्न है। लौकिक छन्दों में लघु, गुरु मात्राओं का आश्रय लिया जाता है जबकि वैदिक छन्दों में केवल अक्षरों की ही गणना की जाती है। इसलिये वैदिक छन्द अक्षर छन्द ही हैं। महर्षि शौनक के ऋक्प्रातिशाख्य में 188 छन्दों का वर्णन प्राप्त होता है। महर्षि गार्ग्य के अनुसार सात मुख्य छन्द और चौदह अतिछन्द मिलकर इक्कीस छन्द हैं। इनके नाम हैं– 1. गायत्री 2. उष्णिक् 3. अनुष्टुप् 4. बृहती 5. पंक्ति 6. त्रिष्टुप् और 7. जगती। अतिछन्द के नाम हैं– 1. अतिजगती 2. शक्वरी 3. अतिशक्वरी 4. अष्टि 5. अत्यष्टि 6. धृति 7. अतिधृति 8. कृति 9. प्रकृति 10. आकृति 11. विकृति 12. संकृति 13. अभिकृति 14. उत्कृति।

कल्प वेद पुरुष के दोनों हाथ हैं। सभी क्रियाओं का सम्पादन हाथों के द्वारा ही सम्पन्न होता है। लोक में दो प्रकार के कर्म प्रचलित हैं। प्रथमतः वैदिक परम्परा जिसमें प्रवेश अग्निहोत्र धारण करने के पश्चात् होता है और दूसरी है स्मार्त परम्परा। स्मार्त परम्परा का प्रवेश लोक में प्रचलित सभी प्रकार के यागादि, व्रतएवं संस्कार आदि के साथ आश्रम व्यवस्था के नियमन में भी है। इस दृष्टि को ध्यान में रखकर हमारे आचार्यों ने कल्प का विभाजन श्रौत सूत्र, शुल्ब सूत्र, धर्म सूत्र, गृह्यसूत्र, पितृमेध सूत्र और प्रवर के रूपों में किया है।

विभिन्न प्रकार के यज्ञों को पूर्ण रूप से संचालित करने का जो विधि–शास्त्र है, वह है श्रौत सूत्र। श्रौत सूत्र उन्हीं विधियों का प्रतिपादन करते हैं जिनका कि वेद में उपदेश किया गया है। वस्तुतः श्रौत सूत्र अपनी–अपनी शाखा परम्परा का अनुवर्तन करते हैं अर्थात् वेद की शाखा विशेष में जिस प्रकार का निर्देश है उसी के सम्पादन हेतु सूत्र रूप में नियमों को ये श्रौत सूत्र प्रस्तुत करते हैं।

शुल्ब का अर्थ होता है धागा या रस्सी। जिस कार्य में धागा की सहायता से कार्य सम्पन्न हो , उस विधान शास्त्र का नाम है शुल्ब सूत्र। इसकी सहायता से विभिन्न प्रकार की यज्ञ वेदियोंएवं चितियों के निर्माण के साथ–साथ यज्ञ मण्डप का निर्माण किया जाता है ।

गृह्यसूत्रएवं धर्मसूत्रों का सम्बन्ध सामाजिक संस्कार, आचारएवं व्यवहार तथा सभी प्रकार के विधि विधानों से है। पितृमेध प्रकरण से मृत्यु उपरात किये जाने वाले विशिष्ट कर्म का ज्ञान होता है। प्रवर के स्मरण से अपनी ऋषि परम्परा का स्मरण करते हैं। इस रूप में छन्दएवं कल्प वेदांग वस्तुतः भारतीय समाजएवं संस्कृति के निर्माता हैं।

3.11 शब्दावलियाँ

1. **निचृत्–** यदि किसी छन्द मेंएक अक्षर कम हो तो उसे **निचृत्** विशेषण से सम्बोधित करते हैं।
2. **भुरिक्–** यदि किसी छन्द मेंएक अक्षर अधिक हो तो उसे **भुरिक्** विशेषण से युक्त किया गया है। उदाहरण के लिये त्रिपदा गायत्री के अक्षरों की संख्या 24 है लेकिन 23 अक्षरों वाली गायत्री को **निचृद् गायत्री** और 25 अक्षरों वाली गायत्री को **भुरिग्गायत्री** कहा जाता है।
3. **विराट् गा**यत्री– दो अक्षरों की हीनता वाली अर्थात् जिसमें दो अक्षर कम है ,ऐसे गायत्री छन्द को को **विराट् गायत्री** कहते हैं।
4. **स्वराट् गायत्री** – दो अक्षरों की अधिकता वाली गायत्री को **स्वराट् गायत्री** छन्द से अभिहित किया गया है।

3.12 बोध प्रश्न या अभ्यास प्रश्न

1. **वेदांग को हम किस रूप में जानते हैं –**
   क) वेद को समझने के सहायक विज्ञान के रूप में
   ख) उपवेद के रूप में
   ग) यज्ञ के रूप में
   घ) उपर्युक्त में से कोई नही
2. **वेदांग के नामकरण का कारण है –**
   क) छन्दएवं ज्योतिष
   ख) वेदांग के रूप में कहे गये वेद के छः अंग
   ग) पराएवं अपरा विद्या का कथन
   घ) वेद का स्वरूप निर्धारित करना।
3. **छन्दस् वेदांग को किस अंग की उपमा दी गई है–**
   क) मुख
   ख) नेत्र
   ग) पाद
   घ) श्रोत्र
4. **छन्दस् वेदांग का विशेष महत्त्व** है –
   क) यज्ञ के संचालन में
   ख) ऋत्विकों के चयन में
   ग) यज्ञ करने के लिये समय के निर्धारण में
   घ) छन्दों के माध्यम से मन्त्रों के परिमाण को जानने में
5. **वैदिक छन्दों का विभाजन किस आधार पर किया गया है–**
   क) छन्दों के आधार पर

ख) स्वर के आधार पर

ग) उदात्त– अनुदात्त के आधार पर

घ) स्वरित के आधार पर

6. वेद में आठ अक्षर वाले छन्द का क्या नाम है–

क) त्रिष्टंप्

ख) गायत्री

ग) अनुष्टुप्

घ) उपर्युक्त सभी गलत हैं

7- 44 अक्षर वाले छन्द का नाम है–

क) पंक्ति

ख) उष्णिक्

ग) त्रिष्टुप्

घ) बृहती

8. इनमें से कौन सा ग्रन्थ छन्दशास्त्र से सम्बन्धित नही है

क) पिंगल का छन्दःसूत्र

ख) छन्दोऽनुशासन

ग) छन्दोमंजरी

घ) निरुक्त

9- कल्प की तुलना वेद पुरुष के किस अंग से की गई है–

क) दोनों हाथ

ख) दोनों नेत्र

ग) श्रोत्र

घ) उपर्युक्त में से कोई नही

10. निम्नलिखित में से किसका सम्बन्ध कल्प से नही है–

क) श्रौत–सूत्र

ख) ब्रह्मसूत्र

ग) धर्मसूत्र

घ) गृह्यसूत्र

11- निम्नलिखित में कौन सा श्रौतसूत्र ऋग्वेद से सम्बन्धित नही है–

क) आश्वलायन श्रौत–सूत्र

ख) शांखायन श्रौत–सूत्र

ग) बौधायन श्रौत–सूत्र

घ) उपर्युक्त में से कोई नही

12- **निम्नलिखित में कौन सा श्रौतसूत्र कृष्ण यजुर्वेद से सम्बन्धित नहीं है–**

क) बौधायन श्रौत–सूत्र,

ख) भारद्वाज श्रौत–सूत्र,

ग) आपस्तम्ब श्रौत–सूत्र,

घ) कात्यायन श्रौत सूत्र

13- **वैतान श्रौत–सूत्र में किस ऋत्विक् के कर्तव्यों का विवेचन है**

क) ब्रह्मा

ख) अध्वर्यु

ग) होता

घ) उद्गाता

14- **इनमें से कौन सा प्रकरण गृह्य–सूत्र से सम्बन्धित नही है –**

क) विवाह आदि संस्कार तथा प्रतिदिन किये जाने वाले होमएवं प्रायश्चित्त कर्म,

ख) दर्शपूर्णमास इष्टि

ग) मासिक तथा वार्षिक श्राद्ध प्रकरण

घ) वापी, कूप, तडागादि की स्थापना विधि,

15- **पितृमेधसूत्र प्रकरण का प्रारम्भ कब किया जाता है–**

क) दर्शपूर्णमास इष्टि प्रारम्भ करने के पूर्व

ख) अग्निहोत्र ग्रहण करने के समय

ग) पिता की मृत्यु के उपरान्त

घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं

16- **निम्नलिखित में से प्रवर का अर्थ है–**

क) गुरु परम्परा

ख) गुरु–शिष्य परम्परा

ग) विवाह संस्कार का अनुष्ठान

घ) ऋषि परम्परा

3.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

– 1.(क), 2. (ख), 3.(ग), 4..(घ), 5.(क), 6.(ख), 7.(ग), 8.(घ), 9.(क), 10. (ख), 11. (ग), 12.(घ), 13.(क), 14. (ख), 15.(ग), 16.(घ)

3.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. संस्कृत वाङ्मय का वृहद् इतिहास प्रथम खण्ड, वेद, प्रधान सम्पादक-पद्मभूषण आचार्य श्री बलदेव उपाध्याय, सम्पादक-प्रो0 व्रजबिहारी चौबे, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ, 1996
2. निरुक्तम्, महामहोपाध्याय श्री छज्जूराम शास्त्री, मेहरचन्द लक्ष्मणदास पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2016

3. वैदिक वाङ्मय का इतिहास, तृतीय भाग ब्राह्मण तथा आरण्यक ग्रन्थ, लेखक-पं0 भगवदत्त, 2016
4. वैदिक छन्दोमींमासा, पं0 युधिष्ठिर मीमांसक, रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़, हरियाणा, 1979
5. छन्दशास्त्र का उद्भवएवं विस्तार, प्रोफेसर श्रीकिशेर मिश्र, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणासी, 2006
6. शौनककृत ऋक्प्रातिशाख्य
7. छन्दःसूत्र, पिंगलप्रोक्त
8. ऋक्सर्वानुक्रमणी, कात्यायन प्रोक्त
9. ए प्रेक्टिकल वैदिक डिक्सनरी, सूर्यकान्त आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली-1981
10. वैदिक कोषः हंसराज एवं भगवद्दत्त, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, 2002
11. वेदांग, वैदिक वाड्मय का बृहद् इतिहास, कुन्दनलाल शर्मा, विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, होश्यारपुर, पंजाब, 1983

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY